www.thearyasamaj.org

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–73, अंक : 37, 8-11 दिसम्बर 2016 तदनुसार 27 मार्गशीर्ष सम्वत् 2073 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

पाप पापी को लौट आता है

स्व० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

असद् भूम्याः समभवत् तद् द्यामेति महद् व्यचः।
तद्वै ततो विधूपायत्प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु।।

-अथर्व० ४।१९।६

शब्दार्थ-असत् = बुराई **भूम्याः** = भूमि से **समभवत्** = होती है। **तत्** = वह **महद्-व्यचः** = महाविस्तारवाली होकर **द्याम्** = आकाश को **एति** = जाती है। **तत्** = वह **वै** = सचमुच **तत्** = वहाँ से **विधूपायत्** = तपकर **प्रत्यक्** = उलटा **कर्त्तारम्** = कर्त्ता को **ऋच्छतु** = प्राप्त होती है।

व्याख्या-भूमि में प्रकाश नहीं है। भूमि अन्धकारमयी है। पाप अज्ञान में, अन्धकार में होता है। मनुष्य पाप करने के समय गुप्त स्थान खोजता है। वेद इस तत्त्व का वर्णन अपनी अलङ्कारमयी भाषा में करता है-**असद् भूम्या समभवत्** = पाप अन्धकार से होता है, किन्तु वह छिपा नहीं रहता। करते समय तो पाप छोटा-सा होता है, परन्तु-**तद् द्यामेति महद्व्यचः** = वह बड़े विस्तार वाला होकर आकाश तक जाता है, अर्थात् पाप की बात खुल जाती है और दूर-दूर तक फैल जाती है। इससे यह न समझना कि दूर तक फैलने से तुम उसके ताप से बच जाओगे। नहीं, कदापि नहीं, वरन्-

'तद्वै ततो विधूपायत् प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु' = वह वहाँ और अधिक तपकर उलटा कर्त्ता को मिलता है। विदुरजी ने कहा है-**'एकः पापानि कुरुते फलं भुंक्ते महाजनः। भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्त्ता दोषेण लिप्यते'** = [महा० उद्यो० ३३।४२] पाप एक करता है, अर्थात् पाप करके पदार्थ लाता है, उसका उपभोग-उपयोग अनेक जन= सारा कुटुम्ब करता है। भोगने वाले पाप के भागी नहीं होते, हाँ, पाप का करने वाला दोषी होता है। **'प्रत्यक् कर्त्तारमृच्छतु'** और **'कर्त्ता दोषेण लिप्यते'** दोनों एक बात कह रहे हैं। भगवान् ने तो इससे भी [अथर्व० १२।३।४८] स्पष्ट बतलाया है-

न किल्बिषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः सह सममान एति।

अनूनं पात्रं निहितं न एतत् पक्तारं पक्वः पुनरा विशाति।।

कर्म में कमी नहीं होती, आश्रय (सिफ़ारिश=समर्थना) नहीं होती। मित्रों के साथ चलता हुआ भी अभीष्ट को नहीं पाता। यह हमारा कर्मपात्र अनून=अन्यून (जिसमें घटा-बढ़ी असम्भव है) रखा है। पकाने वाले को पका हुआ वापस आता है, अर्थात् किसी गुरु, पीर, पैग़म्बर के आधार से कर्मों में न घटा-बढ़ी होती है और न इसमें उलट-फेर होता है। कर्मों का फल कर्त्ता को ही मिलता है। इस तत्त्व को जानकर कर्म बहुत सावधानता से करने चाहिएँ। पाप से छूटने का उपाय भगवान् और ज्ञान का आराधन है।

यस्येदं प्रदिशि यद्विरोचते यज्जातं जनित्वं च केवलम्।
स्तौम्यग्निं नाथितो जोहवीमि स नो मुञ्चत्वंहसः।।

-अथर्व० ४।२३।७

यह सारा-संसार जिसके आदेश में है, जो विशेष प्रकाशमान है, जो आनन्दमय था, है और होगा, उस प्रकाशस्वरूप भगवान् का स्तवन करता हूँ। उपतप्त हुआ, सन्ताप करता हुआ, पश्चात्ताप करता हुआ उसे पुकारता हूँ। वह हमें पापभाव से छुड़ावे। भगवान् शुद्ध है, अपापविद्ध है। मैं अशुद्ध हूँ, पापविद्ध हूँ। इस प्रकार स्तुति करने से मनुष्य पाप से बच जाता है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

www.thearyasamaj.org

अध्यात्मः-मन वशीकरण का वेद विज्ञान

ले. -आचार्य सूर्यादेवी चतुर्वेदा, प्राचार्य-पाणिनि कन्या महाविद्यालय, वाराणसी १०

जीवात्मा शरीर की चेतन सत्ता है। इस जीवात्मा के सहयोगी मन, बुद्धि, आदि जीवात्मा के कारण हैं, साधन हैं। वे साधन जीवात्मा के कार्यों को करते हैं। पर वास्तविकता यह है कि समस्त शारीरिक व्यापारों का करने वाला जीवात्मा स्वयं ही होता है, उन व्यापारों का फल भोगने वाला भी जीवात्मा ही होता है। उदाहरण से ऐसे समझें जब कोई किसी को चाकू, तलवार आदि साधनों से मारता है, तब इस मारने में चाकू, तलवार को दोषी नहीं माना जाता, अपितु व्यक्ति को माना जाता है। वह जो व्यक्ति है, वही जीवात्मा है। मन बुद्धि आदि तो साधन हैं, जीवात्मा का सहयोग करते हैं।

ये मन बुद्धि आदि एक ही सिक्के के चार विभाग माने गये हैं। वह सिक्का है-अन्तःकरण। अन्तःकरण के चार विभाग हैं, मन, बुद्धि, चित्त अहंकार।

अहंकार का कार्यः

अहंकार का अर्थ है-अस्तित्व। किसी भी वस्तु की पृथक रूप से सत्ता। दोनों ही प्रकार की सम्भव है।

अहंकार शरीर व इन्द्रियों से भिन्न होता है। अस्तित्व, अहंपना, ममपना, मैं ऐसा हूँ, वह वस्तु वैसी है आदि कथन अहंकार द्वारा ही होते हैं।

अहंकार = अस्तित्व होने पर ही चेतना की अनुभूति होती है। सांख्य दर्शन में कहा है-

अभिमानोऽहंकारः। सांख्य २/१६।।

अर्थात् अहम् अहम्, मम इति अभितः मननम् अभिमानः = अस्तित्व, अस्तित्वपन एवं मैंपन की वृत्ति को अहंकार कहते हैं।

चित्त का कार्य :

वस्तु या पदार्थ का अस्तित्व होने पर चेतना की अनुभूति होती है। यह चेतना ही पदार्थों के अस्तित्व की स्मृति दिलाती है। चित्त दर्पण की भांति पदार्थों को अपने अन्दर खींच लेता है और अवसर होने पर समय-समय पर द्रष्टा = आत्मा को पुनः पुनः दिखाता रहता है। योग दर्शन में पतञ्जलि कहते हैं-

द्रष्टृदृश्योपरक्तंचित्तंसर्वार्थम्।
योग. ४/२३।।

अर्थात् द्रष्टा = आत्मा, दृश्य = ब्राह्य वस्तु से, उपरक्तम् = सम्बद्ध, चित्तम् = चित्त, सर्वार्थम् = सब दृश्यों को देखने का साधन है। चित्त का कार्य पदार्थों को देखना है।

बुद्धि का कार्य :

बुद्धि का कार्य संदेह और निर्णय करना है। शरीर में जिसके द्वारा निश्चय होता है वह उपकरण बुद्धि है। यह बुद्धि उपकरण आत्मा को किसी भी पदार्थ के स्वरूप को निश्चय कराने का उचित साधन है। सांख्यदर्शन में कहा है-

अध्यवसायो बुद्धिः
सांख्य २/१३।।

अर्थात् निश्चयात्मक जो व्यापार है, उसका नाम बुद्धि है। यह पदार्थ है, इस प्रकार करणीय है आदि निश्चयों द्वारा जिसके द्वारा कार्य में प्रवृत्ति होती है, वह बुद्धि है। यह बुद्धि ही महत्व है, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य आदि सात्विक कार्य बुद्धि द्वारा ही होते हैं। विवेचन, विवेक बुद्धि प्रदान करती है।

मन का कार्यः

मन का कार्य संकल्प = प्राप्ति की इच्छा, विकल्प = निषेध की इच्छा करना है। मन का कार्य चिन्तन करना है। यह पदार्थ है अथवा वह पदार्थ ठीक है, इसका निश्चय करना मन का कार्य नहीं है। वैशेषिक दर्शन में कहा है-

आत्मेन्द्रियार्थसन्निकर्षे ज्ञानस्य भावोऽभावश्च मनसो लिङ्गम्।।
वैशे. द. ३/२/१।।

अर्थात् आत्मा द्वारा विषयों के साथ इन्द्रियों का युगपत् सम्बन्ध होने पर भी ज्ञान का होना तथा न होना मन का लक्षण है।

तात्पर्य हुआ आत्मा और इन्द्रियों के समक्ष अनेक अर्थों के होने पर भी किसी एक विषय का ही ज्ञान होता है दूसरे विषय का ज्ञान नहीं होता। एक ज्ञान का होने व एक ज्ञान का न होने का कारण मन ही है।

मन शरीर, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय इन सबका संचालक है, ये तीनों अपने आप कोई कार्य नहीं करते। ये तीनों तो मात्र ज्ञान व कर्म के साधन हैं। मन से शासित होने पर कार्य करते हैं। जैसे सामने पानी का ग्लास रखा है, आँखें उसे देख रही हैं, देखते हुए भी उठाने का साधन हाथ ग्लास की ओर नहीं बढ़ते, क्योंकि आँख और हाथ के मध्य मन का सम्बन्ध नहीं होता। मन का अंकुश लगते ही ज्ञानेन्द्रिय आँख व कर्मेन्द्रिय हाथ का सम्बन्ध जुड़ जाता है और हाथ ग्लास को उठा लेते हैं।

मन के विज्ञान का यह भी तथ्य है कि मन जिस इन्द्रिय के साथ जुड़ता है वह इन्द्रिय ही उस विषय की ओर आकृष्ट होती है, अन्य ज्ञानेन्द्रियाँ प्रायः अपना कार्य करना बन्द कर देती है। आकर्षक रूप देखते समय कान अपना कार्य नहीं करता, कान से संगीत आदि सुनते समय आँख आदि इन्द्रियाँ जड़वत् हो जाती हैं। इस विज्ञान का कारण है, मन एक समय में एक ही ज्ञान ग्रहण करता है, दूसरा नहीं। न्याय-दर्शन में कहा है-

युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसोलिङ्गम्।।
न्याय. १/१/१६।।

अर्थात् एक काल में अनेक ज्ञानों का उत्पन्न न होना मन का चिह्न है। आत्मा जो सुख दुःख का अनुभव करता है, वह इस ११वीं मन इन्द्रिय से ही करता है। यह आत्मा जैसे ही किसी भी पदार्थ से सम्बन्धित होता है। वैसे ही यह मन आत्मा से सम्बन्धित होता हुआ तत् तत् पदार्थ सम्बन्धी कर्मों को करने लगता है।

मन शरीर व ज्ञानेन्द्रियों कर्मेन्द्रियों दोनों इन्द्रियों से भिन्न है, तथापि मन शरीर और दोनों इन्द्रियों के कार्यों में ओत प्रोत है। मन ही शरीर और दोनों इन्द्रियों के द्वारा कार्य करता है। बन्धन और मुक्ति का कारण मन ही है। उपनिषद् में कहा है-

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोंः।
त्रिपुराता. उप. ५/३।।

अर्थात् मनुष्यों के बन्ध और मोक्ष का कारण मन ही है। यह मन आत्मा का सहयोगी है, आत्मा से प्रकाश ग्रहण कर शरीर व इन्द्रियों से कार्य कराता है। मन को खुला छोड़ने एवं मन में विकार होने पर शरीर व इन्द्रियों के ठीक होने पर भी इन्द्रियाँ व शरीर उचित काम नहीं करते, इन्द्रियाँ बिखर जाती हैं, शरीर रोग युक्त हो जाता है। मन को वश में करने पर एवं मन की विकृति दूर करने पर इन्द्रियाँ वश में रहती हैं, शरीर स्वस्थ रहता है। उचित कार्य के लिए मन का ठीक होना नितान्त आवश्यक है। योग = समाधि के लिए भी मन का ठीक होना, वश में रहना, विकार रहित होना आवश्यक है।

मुक्ति में तो इस ठीक मन का भी सम्बन्ध आत्मा से नहीं रहता। वहाँ तो ज्ञान और प्रयत्न दो ही गुण आत्मा के साथ रहते है। तीन शरीर होते हैं। मुक्ति में उनमें से स्थूल शरीर छूट जाता है कारण और सूक्ष्म शरीर बने रहते हैं।

मन वशीकरण का वेदविज्ञान

आत्मा के प्रकाश से कार्य करने वाला मन जो असावधानी से विकृत हो जाता है, वश में नहीं रहता। वह मन विवेक से वश में किया जाता है। विवेक बुद्धि की सजगता को कहते हैं। बुद्धि के द्वारा ही विचार व कार्य किये जाते हैं। बुद्धि की जो सावधानी होती है, वहीं तो विवेक कहा जाता है। विवेक होने पर मन सही दिशा में चलता है। विवेक न होने पर मन वासनाओं में घिर जाता है, चंचल हो जाता है, इधर उधर भटकता है, अशान्त हो जाता है। मन की ऐसी दशा हो जाने पर तदन्तरस्य सर्वस्य, यजु. ४०/५ सबके अन्दर बाहर विद्यमान परमेश्वर प्राप्त नहीं होता। उपनिषद् में कहा है-

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात्।।
कठो. २/२४।।

अर्थात् जो दुराचार से दूर नहीं है, अशान्त है, तर्क वितर्क में उलझा हुआ है, चंचल मन वाला है, वह परमेश्वर को नहीं प्राप्त कर पाता, वह परमेश्वर तो प्रज्ञानेन =वेदादि शास्त्राधीत ज्ञान से, विवेक से प्राप्त करने योग्य है।

स्थिर मन से परमेश्वर प्राप्त होता है। चंचलवृत्ति से नहीं। अतः योग दर्शन में मन की वृत्तियों को रोक देने को योग कहा है। यथा-

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।
योग. १/२।।

अर्थात् चित्त वृत्तियों को रोकना, अन्तर्मुख होना ही योग कहाता है।

मन को रोकना नितान्त

(शेष पृष्ठ 7 पर)

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

सच्चरित्र ही मनुष्य की पहचान है

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को उसके चरित्र से पहचाना जाता है। मनुष्य को परखने की सही कसौटी उसका चरित्र ही है। मनुष्य की अच्छाई बुराई का निवास उसके मस्तिष्क में है। अपने मस्तिष्क से मनुष्य जैसा सोचता है, वह वैसा ही कार्य करता है और उसी के आधार पर उसके चरित्र का निर्माण होता है। जो मनुष्य अच्छा सोचता है, उसका कार्य भी अवश्य ही अच्छा होता है। मननशील और विवेकशील प्राणी को मनुष्य कहते हैं। विवेकशून्य मनुष्य पशु के समान होता है। जिसमें भले बुरे की पहचान नहीं होती। आचार्य यास्क निरूक्त में मनुष्य की परिभाषा लिखते हैं कि मत्वा कर्माणि सीव्यति अर्थात् जो सोच विचार कर कार्य करता है वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। मनुष्य को मनुष्य बनने के लिए सदैव विवेक से काम लेकर बुराई से बचना और भलाई में प्रवृत्त रहना चाहिए। ऐसा करने से ही मनुष्य मनुष्य कहलाने का अधिकारी होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे सीखने और जानने से ही ज्ञान प्राप्त होता है। उसका ज्ञान स्वाभाविक और एक समान रहने वाला नहीं होता। यही कारण है कि वह अधिक से अधिक उन्नत और अवनत हो जाता है। बिना समाज के वह न तो पालित-पोषित हो सकता है और न विकसित। इस दृष्टि से वह सर्वथा समाज पर आश्रित रहता है। अच्छे समाज में रहने पर मनुष्य अच्छा और बुरे समाज में रहने पर बुरा बन जाता है। मनुष्य के सम्यक् विकास के लिए आवश्यक है कि उसके आसपास का समाज और वातावरण उत्तम हो। साधारणत: मनुष्य वातावरण और परिस्थिति का दास होता है परन्तु मनुष्य वही होता है जो इन दोनों को उपयोगी बनाकर मनुष्यत्व के आचरण में तत्पर रहे। कोई मनुष्य अच्छा है या बुरा इसकी सबसे सुगम पहचान यह है कि यह देखा जाए कि वह किस प्रकार के समाज के सम्पर्क में रहता है। यदि वह अच्छे व्यक्तियों के संसर्ग में रहता है तो समझो वह अच्छा है और यदि बुरे व्यक्तियों के संसर्ग में रहता है तो वह बुरा है।

मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए आवश्यक है कि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास साथ-साथ हो। सब मनुष्यों का यही ध्येय होना चाहिए, उसी में मनुष्य की महत्ता निहित होती है। इसी महत्ता से मनुष्य धर्मात्मा, बुद्धिमान और निर्भीक बनता है। इन तीनों के बल पर मनुष्य चिन्ताओं से, परेशानियों और भय से मुक्त हो सकता है। मनुष्य की पहचान उसकी शक्ल सूरत, धन वैभव, वस्त्राभूषण से नहीं अपितु उसके चरित्र से, उसकी बातों से और उसके कार्यों से हुआ करती है। उसका चरित्र और कार्य ऐसा होना चाहिए जिससे उसी के द्वारा मनुष्य की प्रशंसा हो। इसी प्रकार धार्मिक, राजनैतिक और शैक्षणिक की पहचान उन मनुष्यों के द्वारा हुआ करती है जिन्हें ये प्रणालियां बनाया करती हैं। परन्तु आज मनुष्य का आचरण पशु की भांति दिखाई पड़ता है। आज का मनुष्य धन, सम्पति और भोग का दास बना हुआ है। तथाकथित छद्मवेशधारी आज समाज में सभ्यता और मानवता का चोला पहनकर चरित्रवान होने का दावा करते हैं। आज मनुष्य की योग्यता, विद्वता, मान-सम्मान का मापदण्ड धन-वैभव बना हुआ है। शिक्षा का लक्ष्य आज जीविकोपार्जन हो गया है। राजनीति जुआ है और स्वार्थियों तथा अवसरवादियों का व्यवसाय बनी हुई है। धर्म रोटी का और लोगों को आपस में लड़ाने और मार-काट मचाने का साधन बन गया है। उपर्युक्त तीनों प्रणालियां मानव के लिए देन होने के स्थान में अभिशाप सिद्ध हो रही है। आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य के जीवन का लक्ष्य श्रेष्ठ बने। जिससे मनुष्य अपनी सृजना को गौरवान्वित कर सके। सबसे बड़ी गड़बड़ मानव की भावना में स्वार्थ वृत्ति के आ जाने से तथा मनुष्य जीवन की उपयोगिता और महत्त्व को न समझने के कारण हुई। पतन का अनुपात विलासिता की आसक्ति के अनुपात में होता है। मनुष्य के स्वार्थी तथा विलासी होने से उसका पतन होता है। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह बुरे से बुरे कार्य करने के लिए प्रवृत्त हो जाता है। आज विलासिता और भोगवाद के कारण हमारी संस्कृति भोग प्रधान बन गई है। परमात्मा का डर उसके हृदय से निकल गया, मनुष्य परमात्मा के नियमों की उपेक्षा करके उसे चुनौती देने लग गया। ऐसी अवस्थाओं की कल्पना से भयभीत होकर ही दूरदर्शी तत्त्ववेत्ता यह कहने के लिए बाध्य हुआ कि यदि संसार में ईश्वर न भी होता तो संसार की सुख और शान्ति के लिए उसका आविष्कार करना पड़ता। आज मनुष्य ज्ञान-विज्ञान, कला कौशल, उद्योग-धन्धों, संगठित संस्थाओं, प्रणालियों आदि की दृष्टि से नियन्त्रित और सुव्यवस्थित है। परन्तु प्रश्न यह है कि मनुष्य के ज्ञान का क्या प्रयोग हो रहा है? वह क्या बना हुआ है और क्या कर रहा है। इस प्रश्न का उत्तर बड़ा निराशाजनक है। वह तो अपने निम्नस्तर पर पहुँचा दिखाई देता है। यदि वह अपने ज्ञान-विज्ञान, धन-ऐश्वर्य और कला-कौशल को उच्चतम स्तर की ओर प्रेरित करता तो वह निश्चय ही उन्नति की ओर अग्रसर होता। प्रत्येक मनुष्य में गुण और अवगुण दोनों होते हैं। श्रेष्ठ मनुष्य सदैव मनुष्य के उज्जवल पक्ष को सामने रखते हैं, उससे प्रकाश ग्रहण करते हैं और उसका आदर करते हुए अपने साथ उन मनुष्यों की तथा समाज की उन्नति में सुन्दर योग दिया करते हैं जिन मनुष्यों को हम बुरा और पतित कहते हैं। इसलिए श्रेष्ठ मनुष्य को अगर किसी में कोई बुराई नजर आती है तो उससे घृणा करने के बजाय सही मार्ग पर लाने का प्रयत्न करें, उन्हें सदाचार की शिक्षा दें ताकि वे भी अपने जीवन को उन्नत बना सकें। इन्द्रियों के मन के अधीन, मन के बुद्धि के अधीन और बुद्धि के आत्मा के अधीन होने से मनुष्य का विकास और नियन्त्रण होता है। इस प्रकार के विकास के फलस्वरूप मनुष्य सुन्दरता की अनुभूति का आनन्द उठाता, सत्य से प्रेम करता, बुराई से घृणा करता, सत्कर्म में प्रवृत्त हुआ जीवन को उन्नत बनाता है।

इस संसार से विदा होते समय मनुष्य के साथ कोई वस्तु नहीं जाती केवल उसके द्वारा किए पुण्य कर्म ही साथ देते हैं। आने वाली पीढ़ियों के उपकार के लिए मनुष्य जो श्रेष्ठतम सम्पदा छोड़ता है वह उसकी सच्चरित्रता और पुण्य कर्म होते हैं। मनुष्य अपने चरित्र के बल पर संसार को मार्ग दिखा सकता है। मनुष्य का उत्तम जीवन चरित्र प्रकाश स्तम्भ के समान है जो मार्ग से भटके हुए लोगों को सन्मार्ग पथ दिखा सकता है। संसार में जितने भी महापुरूष हुए हैं उनकी महानता का प्रमाण उनका उच्च तथा आदर्श चरित्र था। आदर्श जीवन चरित्र वाला मनुष्य अपने जीवन के चिन्ह उसी प्रकार छोड़ जाता है जिस प्रकार रेत पर चलने से पीछे मनुष्य के पदचिन्ह रह जाते हैं। इसलिए अगर हम अपने जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें अपने जीवन को उज्जवल तथा आदर्श चरित्र से युक्त बनाना होगा।

प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

www.thearyasamaj.org

"आओ ! आर्ष ग्रन्थों पर दृष्टिपात करें"

-ले० पं० खुशहाल चन्द्र आर्य १८० महात्मा गान्धी रोड़, (ढो तल्ला) कोलकत्ता-700007

यह लेख "वैदिक धर्म आर्य समाज प्रश्तनोत्तरी" पुस्तक से उद्धृत है। इस लेख के पढ़ने से सुधि पाठकों को वैदिक धर्म के ग्रन्थों की जानकारी बढ़ेगी, जिसमें उनकी पढ़ने की रूचि भी बढ़ेगी। इसी उद्देश्य से यह लेख लिखा गया है, जो इसी भाँति है-

प्रश्न: वेद किसको कहते हैं?

उत्तर: वेद शब्द का अर्थ-ज्ञान है।

प्रश्न : वेद कितने हैं और उनमें क्या बतलाया गया है ?

उत्तर-वेद चार है, जिनके नाम ऋग्वद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हैं। मनुष्यों को किस तरह के काम करने चाहिए, परिवार, समाज, देश और विश्व की उन्नति कैसे हो सकती है तथा संसार में शान्ति कैसे रह सकती है, ईश्वर की उपासना कैसे करनी चाहिए आदि सब बातें वेदों में बताई गई हैं। उनसे सब को लाभ पहुँच सकता है।

प्रश्न : वेदों का ज्ञान किसने और क्यों दिया ?

उत्तर: वेदों का ज्ञान ईश्वर ने दिया, जो सर्वज्ञ अर्थात् सब कुछ जानने वाला है। ईश्वर ने यह ज्ञान इसलिए दिया कि सबको सुख-शान्ति और आनन्द प्राप्त हो सके। ईश्वर सब का माता-पिता है, हम सब प्राणी उसके बच्चे हैं। जैसे माता-पिता, अपने बच्चों की भलाई के लिए उन्हें अच्छी बातें सिखाते हैं, वैसे ही ईश्वर ने हमारे कल्याण के लिए वेदों का ज्ञान दिया।

प्रश्न : वेदों का ज्ञान ईश्वर ने कब, क्यों और किसको दिया?

उत्तर : यह ज्ञान ईश्वर ने मनुष्य-सृष्टि के आरम्भ में दिया। यदि बाद में देता तो पूर्व-सृष्टि उसके लाभ से वंचित रह जाती। ईश्वर ने यह ज्ञान पूर्व में चार ऋषियों को दिया, क्योंकि मनुष्य उस ज्ञान के बिना कुछ नहीं सीख सकता था और न कुछ समझ सकता था कि कौन-से काम मुझे करने चाहिए और कौन-से काम नहीं। जब तक हमें कोई सिखाने वाला न हो तब तक हम लिखना पढ़ना नहीं सीख सकते। सृष्टि के आरम्भ में सिवाय ईश्वर के कौन मनुष्य को उपदेश देता ? उन चार ऋषियों के नाम जिनको मनुष्य-सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेद ज्ञान दिया था, वे थे अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा।

प्रश्न : उपवेद कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर : उपवेद चार हैं। उनके नाम आयुर्वेद, धनुवेद, गंधर्व वेद और अथर्वेद है। आयुर्वेद, ऋग्वेद का उपवेद है, इसमें शरीर की रक्षा और आरोग्य व तन्दुरूस्ती के उपाय, दवाइयों के गुण और बीमारियों के इलाज आदि का वर्णन है। आजकल आयुर्वेद के ग्रन्थों में से चरक-संहिता और सुश्रुत संहिता प्रसिद्ध है। धनुर्वेद, यजुर्वेद का उपवेद है और उसमें धनुष-वाण चलाने आदि का सारा विषय है। अथर्ववेद का उपवेद अथर्वेद है, कारण ऋग्वेद की तरह अथर्व वेद में भी औषधि विषयक कई सूक्त पाये जाते हैं।

प्रश्न : वेदों के पुराने भाष्य कौन-से हैं, जिनसे वेदों के अर्थ समझने में सहायता मिल सके ?

उत्तर : वेदों के पुराने भाष्य ब्रह्मण-ग्रन्थ हैं, जिन को महीदास, ऐतरेय, याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों ने बनाया। इनमें से प्रसिद्ध ये हैं:

ऋग्वेद का ब्राह्मण-एतरेय ब्राह्मण,

यजुर्वेद का ब्राह्मण-शतपथ ब्राह्मण

सामवेद का ब्राह्मण-साम व ताण्ड्य महा ब्राह्मण,

अथर्ववेद का ब्राह्मण-गोपथ ब्राह्मण।

इनमें वेदों में आए शब्दों के अर्थ बताए गए हैं तथा यज्ञों में उनका प्रयोग बताया गया है।

प्रश्न : वेदांग कितने और कौन-कौन-से हैं ?

उत्तर : वेदांग छः हैं, इनके नाम ये हैं-

शिक्षा, व्याकरण, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष और कल्प। इनके पढ़ने से वेदों को समझने में बड़ी सहायता मिलती है। व्याकरण ग्रन्थों में पाणिनि मुनिकृत अष्टाध्यायी और पतञ्जलि मुनिकृत छन्द शास्त्र बड़ा प्रसिद्ध है।

प्रश्न : उपांग कौन-कौन से हैं और उन्हें किन-किन ऋषियों ने बताया ?

उत्तर-उपांगों को दर्शन-शास्त्र व दर्शन के नाम से भी कहा जाता है। ये छः हैं, जिनमें आत्मा, परमात्मा, प्रकृति, जगत् की उत्पत्ति और मुक्ति इत्यादि कठिन प्रश्नों पर विचार किया गया है, इनके नाम निम्नलिखित हैं-

गौतम मुनिकृत-न्याय-शास्त्र या दर्शन, कणाद मुनिकृत-वैशेषिक-शास्त्र या दर्शन, कपिल मुनिकृत-सांख्य-शास्त्र या दर्शन, पतञ्जलि मुनिकृत-योग-शास्त्र या दर्शन, जैमिनि मुनिकृत-पूर्वमीमांसा-शास्त्र या दर्शन, वेदव्यास मुनिकृत-उत्तर मीमांसा-शास्त्र या दर्शन।

प्रश्न : ऋषिकृत उपनिषदें कौन-कौन सी और कितनी हैं तथा उनमें किस-किस विषय का वर्णन है ?

उत्तर : वैसे तो आजकल 150 के लगभग उपनिषदें पाई जाती हैं, पर प्रमाणिक ऋषिकृत उपनिषदें (ग्यारह) हैं, जिनके नाम ये हैं-

(१) ईश, (२) केन, (३) कठ, (४) प्रश्न, (५) मुण्डक, (६) माण्डूक्य, (७) ऐतरेय, (८) तैत्तिरीय, (९) छान्दोग्य, (१०) वृहदारण्यक (११) श्वेताश्वतर।

इनमें ऋषियों ने वेदों और अपने अनुभव के आधार पर ब्रह्म विद्या का उपदेश दिया है, जो बड़ा शान्ति देने वाला है।

प्रश्न : धर्म शास्त्र कितने हैं और उनमें से प्रमाणिक कौन-कौन से हैं ?

उत्तर-जैसे पहले बताया जा चुका है, सबसे अधिक प्रामाणिक और मानने योग्य धर्म शास्त्र तो वेद ही हैं। उसके विरूद्ध वचन चाहे किसी भी पुस्तक में पाये जाये, वे मानने योग्य नहीं हो सकते। पुराने ऋषियों के नाम से धूर्त-स्वार्थी लोगों ने कई पुस्तकें लिख डाली हैं तथा अच्छे ग्रन्थों में भी कई प्रक्षेप व मिलावटें कर डाली हैं, जिनके कारण यह पहचानना कठिन हो गया है कि कौन-सा हिस्सा असली और कौन-सा बनावटी हैं। यह भी विचारपूर्वक पढ़ने से यह बात मालूम हो सकती है। धर्मशास्त्रों व स्मृतियों में पहला स्थान मनुस्मृति का है, जिसे वेदों के आधार पर मनु महाराज ने बनाया था, इसमें भी समय-समय पर बहुत-सी मिलावटें होती रही है, इसलिए प्रक्षेप को छोड़ कर वेदानुकूल उसके वचनों को ही मानना चाहिए, औरों को नहीं। वासिष्ठ, गौतम, अत्रि, बोधायन, प्रजापति, हारीत, यम, पराशर आदि के नाम पर भी बहुत-सी स्मृतियाँ आजकल पाई जाती हैं, यह इनकी अच्छी बातें वेद और बुद्धि के विरूद्ध होने तथा परस्पर विरूद्ध होने से उनको ऋषिकृत नहीं माना जा सकता। न उन्हें धर्म के विषय में प्रमाण समझा जा सकता है। आपस्तम्ब, पारस्कर, आश्वलायन, गोभिल, जैमिनी सांख्यायन आदि कृत गृह्यसूत्र भी पाये जाते हैं, जिनमें संस्कारों का प्रतिपादन है। इनको भी प्रायः स्मृतियों के नामों से कहा जाता है। वेद-विरूद्ध भाग छोड़ कर, ये सूत्र-ग्रन्थ संस्कार तथा आश्रम-धर्म आदि के विषय में उपयोगी हैं। वेदों को शाखाएं तथा अन्य बहुत-से प्राचीन ग्रन्थ लुप्त प्राय हो चुके हैं जिनको खोजने की जरूरत है।

www.thearyasamaj.org

विज्ञान का ज्ञान-ब्रह्मज्ञान

-ले. नरेन्द्र आहूजा 'विवेक' 602 जी एच 53 सैक्टर 20, पंचकूला

ईश्वरीय ज्ञान ब्रह्मज्ञान को सर्वोपरि परन्तु सृष्टि को मिथ्या मानने वालों तथा अनीश्वरवाद के पोषक वैज्ञानिकों में एक तीव्र मतभेद रहता है। अलग-अलग मत मतान्तरों को मानने वाले ईश्वर के स्वरूप और कार्यों की अपनी अपनी परिकल्पनाओं के समक्ष वैज्ञानिक अनुसंधानों पर सदैव प्रश्न चिन्ह लगाते रहे हैं। फिर चाहे स्वयं को सबसे अधिक प्रगतिशील मानने का दंभ भरने वाले ईसाई चाहे पृथ्वी को गोल बताने पर वैज्ञानिकों को दंड दें या फिर रेल के भाप के इंजन को शैतान की खोज बताकर बाद में शर्मसार होते रहें या फिर खुदा का सातवें आसमान पर बताने वाले हो या अन्य। सभी का मतभेद वैज्ञानिक अनुसंधानों से अपने अपने समय पर रहा है। वहीं दूसरी ओर अपनी नित नई खोजों से उत्साहित और अपने अनुसंधानों के वैज्ञानिक आधार के कारण यह वैज्ञानिक वर्ग इन अलग-अलग मत मतान्तरों द्वारा दिए ईश्वर के स्वरूप को कोरी कल्पना बता कर खारिज करते हैं। वैज्ञानिक दल तो सीधे आरोप लगाता है कि ईश्वर का डर दिखा कर यह अपनी मनमानी प्रथायें लोगों का शोषण करने के लिए चला रहे हैं और इनका कोई वैज्ञानिक या तार्किक आधार नहीं है।

अब प्रश्न उठता है कि आखिर कौन ठीक है सत्य क्या है। सत्य को जानने के लिए हमें पूर्णतया वैज्ञानिक सत्य सनातन वैदिक धर्म के सिद्धांतों को समझना होगा। आखिर इन वैज्ञानिकों और मत मतान्तरों में से कौन ठीक है। सूक्ष्मता से देखने पर पता चलता है कि दोनों ही अर्धसत्य के शिकार हैं। इसका उत्तर खोजने के लिए हमें संपूर्ण सत्य जानना होगा। विज्ञान की कोई भी खोज पहले से चले आ रहे नियमों का अनुसंधान मात्र ही तो हैं जैसे वैज्ञानिकों के खोजने मात्र से ही तो पृथ्वी गोल नहीं हो गई वह तो पहले से ही गोल थी। वैज्ञानिकों ने तो ईसाई मत के सिद्धांत का खंडन किया कि पृथ्वी चपटी है। ठीक इसी प्रकार पृत्वी के अपनी धुरी पर घूमने से दिन और रात का बनना, सूर्य का पूर्व में उदय होना और पश्चिम में अस्त होना आदि आदि सृष्टि के निर्माण के समय से ही स्थापित नियमों का वैज्ञानिक आदार मात्र ही तो हैं।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि इन वैज्ञानिकों ने कोई नया नियम बनाया अपितु अपने अनुसंधान से केवल उन सनातन पुरातन ईश्वरीय नियमों के आधार को खोजने का प्रयास किया। उससे कुछ अधिक देखें तो अपने अनुसंधान से इन पूर्व स्थापित नियमों द्वारा मानव मात्र की सुविधाओं के लिए साधन एकत्रित किए। जैसे पृथ्वी की गुरूत्वाकर्षण शक्ति प्रत्येक क्रिया की बराबर व विपरीत प्रतिक्रिया आदि-आदि पर आधारित वैज्ञानिक खोजों से बने सुविधा के उपकरण।

आखिर इन सब नियमों का नियम क्या है ? सूत्रों का सूत्र कौन है ? या फिर कहें वैज्ञानिक खोजों का आधार क्या है ? इसका उत्तर अथर्ववेद के मंत्र, सूत्र सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्यात् ब्राह्मणं महत्। में समाहित है अर्थात् जो पुरूष इस 'सूत्रस्य सूत्रं' यानि सूत्र के भी सूत्र को जान लें वही बड़े ब्रह्म, ईश्वर और ईश्वरीय ज्ञान को जान पायेगा। विज्ञान के जितने भी नियम है वह वैज्ञानिकों के बनाए हुए नहीं अपितु केवल मात्र खोजे हुए हैं। विज्ञान के इन नियमों को बनाने वाला तो इस सृष्टि का रचयिता और सृष्टि को ईश्वरीय नियमों में चलाने वाला वह परमपिता परमेश्वर ही है। विज्ञान के सभी नियम, सभी शाखायें भौतिकी, रसायनी, गणित आदि-आदि चाहे देखने में अलग-अलग प्रतीत होती हों लेकिन अतत: छोटे-छोटे नदी नालों की तरह ज्ञान के अथाह सागर में ही जाकर मिल जाती है। यह ज्ञान का अथाह सागर ही तो ईश्वरीय ब्रह्म ज्ञान है और यही 'सूत्रस्य सूत्रं' अर्थात् धागों का वह धागा है जिसने सभी को एक साथ पिरोया हुआ है। इसीलिए एक अन्य वेदमंत्र में कहा गया **'पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति'** अर्थात् ये समस्त सृष्टि, सृष्टि के नियम, इन नियमों के नियम उस सृष्टिकर्ता ईश्वर की रचना ही तो हैं जो ना कभी मरती है और ना ही बूढ़ी होती है अर्थात् ईश्वरीय नियमों में कदापि कोई परिवर्तन नहीं होता और इसीलिए हम कह सकते है कि ईश्वरीय ब्रह्मज्ञान समस्त वैज्ञानिक अनुसंधानों का ज्ञान व आधार है। वैज्ञानिक अनुसंधान और ब्रह्मज्ञान दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान तो सत्य ईश्वरीय सिद्धांतों व नियमों की पुष्टि करने का साधन हैं।

जालन्धर आर्य समाज अड्डा होशियारपुर का 130वां वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का 130वां वार्षिक उत्सव दिनांक 28 नवम्बर से दिनांक 4 दिसम्बर 2016 तक बड़े उत्साहपूर्वक एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर आर्य आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान् आचार्य राजू वैज्ञानिक जी के प्रवचन तथा श्री राजेश अमर प्रेमी जी के मधुर भजन हुए। प्रात:काल की बेला में स्वस्ति याग के मन्त्रों द्वारा यज्ञ किया गया जिसमें भिन्न-भिन्न परिवारों ने यजमान बनकर आहुतियां अर्पित की। रात्रिकालीन सभा में प्रतिदिन भजन एवं वेदकथा होती रही।

दिनांक 4 दिसम्बर 2016 रविवार को प्रात: 8:00 बजे स्वस्ति याग का आरम्भ हुआ जिसकी पूर्णाहुति 10:00 बजे हुई। श्री सोहन लाल सेठ जी ने सपरिवार यजमान बनकर यज्ञवेदि को सुशोभित किया। सप्ताह भर बनने वाले सभी यजमानों ने यज्ञ की पूर्णाहुति ड़ालकर यज्ञ को पूर्ण किया। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य राजू वैज्ञानिक एवं अन्य सभी विद्वानों ने यजमान परिवारों को आशीर्वाद दिया एवं प्रसाद वितरण किया। इसके बाद सभी ने प्रात:राश ग्रहण किया। ठीक 10:30 बजे श्री अशोक सरीन जी के करकमलों द्वारा ओ३म् की पताका फहराई गई। सभी आर्यजनों ने ध्वज गीत गाकर वैदिक धर्म की जय का संदेश दिया। 130वें वार्षिक उत्सव का मुख्य कार्यक्रम 11:00 बजे शुरू हुआ। सर्वप्रथम भजनों के द्वारा इस कार्यक्रम को आरम्भ किया गया। तत्पश्चात सभी विद्वानों ने अपने-अपने विचारों के द्वारा जनता को लाभान्वित किया। महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों, वेद के सन्देश को घर-घर फैलाने एवं अपने चरित्र को उज्जवल बनाने की प्रेरणा सभी विद्वानों ने दी। मंच का संचालन श्री सोहन लाल सेठ जी ने किया। कार्यक्रम के अन्त में श्री सोहन लाल सेठ जी ने सभी विद्वानों एवं आर्य जनता का हार्दिक धन्यवाद करते हुए कहा कि आप सबके सहयोग से यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ है। उन्होंने सभी गणमान्य अतिथियों का, कार्यकर्ताओं का हृदय से धन्यवाद किया। ठीक 1:30 बजे निर्धारित समय पर शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन किया गया। आर्य समाज के प्रधान श्री विनोद सेठ जी की कुशलता एवं कर्मठता से कार्यक्रम बहुत ही सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। लंगर की व्यवस्था भी श्री विनोद सेठ जी की देखरेख में हुई जिसे उपस्थित आर्य जनता ने बड़ी श्रद्धा से ग्रहण किया। इस कार्यक्रम में जालन्धर की सभी आर्य समाजों के अधिकारियों एवं सदस्यों ने भाग लिया और कार्यक्रम को सफल बनाने में अपना योगदान दिया।

-रमेश कालड़ा महामन्त्री आर्य समाज

www.thearyasamaj.org

पृष्ठ 2 का शेष-अध्यात्मः-मन वशीकरण...

आवश्यक है। परमेश्वर को प्राप्त करने के लिए मन पर वशीकरण करना अनिवार्य है। वशीकरण से परमात्मा प्राप्त होता है, मुक्ति मिलती है।

मन के वशीकरण का उपाय बताते हुये वेद का संदेश है-

आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात्।
अग्ने त्वाङ्कामया गिरा।।
यजु० १२/११५।।

अर्थात् हे अग्ने = अग्नि सदृश तेजस्वी, विद्वान, त्वाङ्कामया = तुम्हारी कामना करने की निमित्त, गिरा = वाणी से, ते = तेरा, मनः = चित्त, परमात् = भली प्रकार से, आ सधस्थात् = परम उत्कृष्ट, एक से, समान स्थान में स्थिर हो जाता है। वैसे तुम भी स्थिर होकर मुक्ति को अवश्य प्राप्त होवो।

मन्त्र में वाणी और मन के द्वारा स्थिर होने का निर्देश है। मनुष्य जब वाणी से बोलता रहता है और मन से नाना विचारों में संलग्न रहता है, तब यत्पुरुषो मनसाभिगच्छति तद् वाचा वदति, तत् कर्मणा करोति बृह. जा. १/१, उसकी वृत्तियाँ एकाग्र नहीं होती, अपितु बाह्य विषयों में दौड़ती रहती हैं। जब मनुष्य जैसे गाय का बछड़ा सब ओर से अपने मन को हटाकर पालन पोषण करने वाली अपनी माँ गौ को दौड़ कर प्राप्त कर लेता है, वैसे ही परमात्मा को चाहने वाला सब ओर से अपनी वाणी पर संयम कर, मन को एकाग्र कर मन और वाणी को परमात्मा में लगाता है, तो निश्चय ही वह परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

मन पर वशीकरण करते हुये वाणी का वशीकरण अवश्य ही नहीं नितान्त अवश्यक है। वाणी ही तो मन के विचारों को फैलाती है, कार्य रूप में परिवर्तित करती है, कार्य उसका ही परिणाम है। वाणी पर संयम होने पर मन भी वश में हो जाता है। जब वाणी ही कार्य को विस्तृत नहीं करेगी ! तो मन भी विचार करके क्या करेगा ! वाणी की इस महिमा के कारण ही वाणी को ठीक करने के लिए सन्ध्या के अंगस्पर्श मन्त्रों में सर्वप्रथम ओं वाक् वाक् मन्त्र द्वारा वाणी के सामर्थ्य की ही परमात्मा से प्रार्थना की गई है।

मन को रोकना कितना आवश्यक है, यह मन्त्र से स्पष्ट है। जब मन रुकेगा, वश में होगा, तब ही वाक् आदि इन्द्रियां अपना स्वेच्छाचार छोड़ेंगी। जब तक इन्द्रियाँ निरंकुश हो कर रहेंगी, तब तक परमात्मा मेल कठिन है। इन्द्रियाँ उसी की निरंकुश होती हैं, जो आत्मज्ञान से रहित होता है। यमाचार्य का कथन है-

यस्त्वविज्ञानवान् भवत्ययुक्तेन मनसा सदा।
तस्येन्द्रियाण्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः।।
कठो. ३/५।।

अर्थात् जो पुरुष निश्चय से आत्मज्ञान से हीन होकर विषयों में फंसा होता है, वह चित्त वृत्तियों के निरोध न होने के कारण सर्वदा उन्हीं वृत्तियों के मन से विद्यमान होता है। उसकी कर्ण आदि इन्द्रियाँ रथ को चलाने वाले सारथी के स्वेच्छाचारी, असंयत घोड़ों के सदृश वश में नहीं रहती।

आत्मज्ञानी कौन ?

जो अपनी परख करने वाला है, विवेक रखने वाला है, वही आत्मज्ञानी होता है। जो आत्मज्ञान से पूर्ण होता है, विवेकी होता है, वह ही इन्द्रियों को वश में कर लेता है। यथा-

यस्तु विज्ञानवान् भवति युक्तेन मनसा सदा।
तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः।।
कठो. ३/६

अर्थात् जो पुरुष निश्चय से आत्मज्ञानी होता है, विवेकशील होता है, वह अभ्यास और वैराग्य से (अभयासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः योग. १/१२) इन्द्रियों का वशीकरण करके युक्त मन से सदा विद्यमान होता है। उसकी कर्ण आदि इन्द्रियाँ रथ चालक के प्रशिक्षित घोड़े के सदृश वश में हो जाती है।

कठोपनिषद् के इस वचन में विज्ञानवान् शब्द आया है, विज्ञान का तात्पर्य है कर्म, उपासना, एवं ज्ञान का यथावत् उपयोग। और जो इनका यथावत् उपयोग करता है वह विज्ञानवान् कहाता है।

जीवात्मा जब अविज्ञानवान् आत्मज्ञान से रहित होता है, तब वह मन आदि इन्द्रियों को वश में नहीं कर पाता, उनका दास बन जाता है। इस दासत्व के कारण वह मिथ्या आहार मांस, मत्स्य, मद्य, अण्डे आदि अभक्ष्य पदार्थों को खाने लगता है। आहार दूषित होने से चोरी जारी आदि बाह्य दोष करता है, राग द्वेष आदि आन्तरिक दोषों से लिप्त हो जाता है। ये दोष विवेक और ईश्वर प्राप्ति के मार्ग को बन्द कर देते हैं।

जैसे अशिक्षित व दुष्ट घोड़ा सारथी को अभीष्ट स्थान पर नहीं पहुँचा पाता, वैसे आत्मज्ञान से रहित व्यक्ति भी चित्त वृत्तियों के निरोध के बिना, वश में न रहने वाली इन्द्रियों से अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं करता, दुःख से दूर नहीं होता। घट में जब तक एक भी छिद्र है, तब तक जल, घृत आदि उसमें नहीं भरे जा सकते, वैसे ही व्यक्ति की किसी भी इन्द्रिय में विषय की दौड़ लगी हुई है, तब तक मन को रोकना, चित्त वृत्तियों को वश में करना बड़ा कठिन है। कठोपनिषद् के इस वचन में इन्द्रियों को रोकने के लिए २ उपाय निर्दिष्ट किए है, १. विज्ञानवान् = आत्मा के ज्ञान वाला होना, 2. युक्तेन मनसा = मन की वृत्तियों को वश में करने वाला होना।

आत्मज्ञानी होने का फल

विज्ञानवान् = आत्मज्ञानी आत्मा का ज्ञान होने पर तो मन को तो वश में करता ही है, जन्म मरण के बन्धन, दुःखों से भी छूट जाता है। यथा-

यस्तु विज्ञानवान् भवति समनस्कः सदा शुचिः।
स तु तत्पदमाप्नोति यस्मात् भूयो न जायते।।
कठो. ३/८।।

अर्थात् जो पुरुष आत्मज्ञानी व विचारशील होता है, सदा राग द्वेष आदि से रहित होकर शुद्ध होता है, वह मन को वश में कर लेता है, वह निश्चय से प्राप्त करने योग्य ब्रह्म के उस मोक्ष पद को भी प्राप्त होने पर, भूयः = पुनः, न जायते = जन्म मरण नहीं होता।

उपनिषद् वचन में जन्म मरण के दुःख से छूटने का उपाय विज्ञानवान् = आत्मवित् होना एवं समनस्कः = मन वाला अर्थात् मन को वश में करने वाला बताया है, ऐसा करने वाला कोई भी जन जन्म मरण के दुःखों से छूट सकता है।

इस प्रकार निष्कर्ष हुआ परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मन व इन्द्रियों को वश में करना अति अनिवार्य है। स्वयं आत्मा का ज्ञानविद् होना भी अति महत्त्वपूर्ण है। अपने को समझें, मन आदि इन्द्रियों को वश में करने का प्रयत्न करें।

आर्य समाज के वार्षिकोत्सव फोल्डर का विमोचन

आज के समय में भारत की सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के होते पतन को देखते हुए आर्य समाज की स्थापना की और इस संगठन ने अब तक अनेकानेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक सुधार के लिए छोटे से लेकर राष्ट्रीय स्तर के आयोजन समाज के विकास के लिये किये।

वर्तमान में भी आर्य समाज ने देश की आजादी के लिए कुर्बानी दी। जिन्होंने समाज सुधार में अपनी आहुतियां दी उनकी याद दिलाते हुए देश के युवाओं को देश का इतिहास एवं भारत की संस्कृति के प्रति लगाव व जागरूकता का कार्य आर्य समाज कुशलता से कर रहा है।

आर्य समाज तलवण्डी के वार्षिकोत्सव २०१६ के फोल्डर का विमोचन करते हुए कोटा नगर निगम के महापौर महेश विजय ने उक्त विचार व्यक्त किये।

आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा व आर्य समाज तलवण्डी के प्रधान आरसी आर्य की अगुवाई में शिवदयाल गुप्ता, योगराज कुमरा, राधाबल्लभ राठौर, विष्णु गर्ग, श्रीमती सुमन बाला सक्सेना, श्रीमती इन्दु आर्या, तलवण्डी स्थित महापौर के निवास पर पहुंचे।

गायत्री मंत्र के सुसज्जित रेशमी केसरिया दुपट्टा प्रार्थना मंत्रोच्चारण के साथ महापौर को आरसी आर्य द्वारा पहनाया गया। अर्जुनदेव चड्ढा व आरसी आर्य ने महापौर को वार्षिक उत्सव से संबंधित कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी दी तथा उन्हें कार्यक्रम के शुभारंभ पर आमंत्रित किया।

जिसमें कार्यक्रम के निमंत्रण को स्वीकार कर कार्यक्रम में आने का आश्वासन दिया।

-आर सी आर्य
प्रधान आर्य समाज तलवण्डी

www.thearyasamaj.org

कर्ज व मर्ज से बचें और फर्ज को निभायें

सुख-शान्ति व समृद्धि युक्त आनन्दमय जीवन जीने के लिए कर्ज व मर्ज से बचें और फर्ज को सदैव निभाते रहें। जिस व्यक्ति के सिर पर कर्ज का बोझ होता है, मांगने वाला वायदे के मुताबिक जब वह पैसे मांगता है और कर्ज से मजबूर व्यक्ति जिसके पास कर्ज वापिस करने के लिए एक पैसा भी नहीं होता उसकी अन्तरात्मा से पूछो कि उसकी क्या दशा होगी ? वह बेचारा कभी फोन बन्द करेगा, कभी फोन में झूठ बोलेगा कि मैं घर पर नहीं हूँ, कभी बच्चों से झूठ बुलवायेगा कि कोई यदि पूछे तो कहना कि घर नहीं हैं। शर्मिंदा होना, लुक्ना-छुपना, झूठ छल-कपट आदि के नानाविधि हथकण्डे अपनाता है। इस लिए व्यक्ति को कमाने के साथ-साथ खर्च करने की कला भी अवश्य सीखनी चाहिए। जिसे खर्च करने की कला आ गई वह कभी ऋणी नहीं हो सकता। अपनी आय को ध्यान में रख कर ही खर्च करना चाहिए। ऐसा कदापि न करें कि कमाई 100 रुपये की और खर्च 200 रुपये करें। अपनी कमाई से कुछ कम खर्च करें और अपनी कमाई का कुछ हिस्सा जरूर बचायें। फिजूल खर्ची से बचें, क्योंकि कर्ज लेकर खर्च करना दुःख का कारण है। ऋणी व्यक्ति हमेशा चिन्ताग्रस्त रहता है।

इसी तरह मर्ज यानि बीमारी (रोग) को भी अधिक आगे नहीं बढ़ने देना चाहिए, जब कभी शरीर में दुर्भाग्य से कोई रोग उत्पन्न हो जाये तो यथाशीघ्र उचित उपचार (Treatment) व परहेज़ द्वारा तुरन्त रोग से निवृत्ति कर लेनी चाहिए। बीमारी छोटी हो या बड़ी अच्छे वैद्य (डॉक्टर) से परामर्श करके रोग की समुचित जांच करवा कर ही दवाई लें, सही इलाज करवायें ताकि बीमारी शीघ्र ठीक हो जाए। बिना डाक्टर को दिखाये अपनी मन मर्जी से दवाई कभी भी न लें। ठीक उपचार व परहेज़ से ही रोग से मुक्ति मिल सकती है। मर्ज अधिक बढ़ जाने पर इलाज में कठिनाई होती है और व्यक्ति दुःखी होता है।

तीसरा है फर्ज जिसे हर सम्भव प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य निभाना चाहिए। फर्ज व्यक्तिगत हो, पारिवारिक हो, सामाजिक हो, रिश्तेदारियों का हो अथवा राष्ट्रीय फर्ज हो यथा उचित अवश्य निभाना चाहिए। फर्ज जिम्मेवारी है, कर्त्तव्य है, ड्यूटी है, हमें सब के साथ ठीक-ठीक कर्त्तव्य करना है, अर्थात् फर्ज निभाना है। किसी के साथ धोखाधड़ी, विश्वासघात नहीं करना, किसी भी फर्ज (कर्त्तव्य) पर (नलिप्यते) लिप्त नहीं होना, फंसना नहीं है, कोई कुछ भी कहता रहे, कहने दें, अपने फर्ज रूपी कर्म से "च्युत" न होने वाला व्यक्ति अपने फर्ज रूपी कर्ज से मुक्त हो जाता है।

अस्तु ! आइये, जीवन में कर्ज व मर्ज से बचते हुए अपने-अपने फर्ज को सदैव पूरा करते रहें। फर्ज तो अवश्य पूरा करें पर किसी से विशेष लगाव नहीं रखना चाहिए, अन्यथा मोहरूपी अज्ञान उत्पन्न हो जाने पर बहुत दुःख का कारण होता है। नेकी कर कुएँ में डाल की भावना से फर्ज अदा करें और जीवन भर सुखी रहें।

लेखक-आचार्य रामसुफल शास्त्री (हाँसी)

शोक समाचार

आर्य समाज बस्ती गुजां के महामंत्री श्री सुदेश कुमार जी की धर्मपत्नी श्रीमती कान्ता रानी शर्मा जी का गत दिनों देहावसान हो गया। श्री कान्ता रानी जी शर्मा की यज्ञ के प्रति अगाध श्रद्धा थी और वह प्रतिदिन आर्य समाज में हवन किया करती थीं। उनकी आत्मिक शान्ति के लिये मंगलवार 13 दिसम्बर 2016 को आर्य सी. सै. स्कूल 120 फुटी रोड़ जालन्धर में दोपहर 2 बजे से 3 बजे तक शोक सभा रखी गई है।

-विपिन शर्मा बस्ती गुजां जालन्धर

रंग भरो प्रतियोगिता का परिणाम घोषित

वैदिक शिक्षा परिषद फाजिलका द्वारा 20, 21 एवं 22 अक्तूबर को आयोजित रंग भरो प्रतियोगिता का परिणाम घोषित कर दिया गया। प्रतियोगिता संयोजक वेदप्रकाश शास्त्री ने बताया कि यह प्रतियोगिता नर्सरी, एल के जी. यूके जी, पहली और दूसरी पांच ग्रुपों में आयोजित की गई। इसमें चौदह स्कूलों के ग्यारह सौ छात्र-छात्राएं सम्मिलित हुए।

नर्सरी ग्रुप में सरस्वती विद्या मंदिर का साजन प्रथम, सत्संग एलि. प्रा. स्कूल का अंश द्वितीय, एल के जी ग्रुप में श्रीराम पब्लिक स्कूल का राजीवर सिंह प्रथम, कौटिल्य इंटर-नेशनल स्कूल का अमृतपाल द्वितीय और डी. सी. डी. ए. वी. स्कूल का अमरदीप तृतीय स्थान पर रहा। यूके जी ग्रुप में डी. सी. डी. ए. वी. स्कूल की कर्मजीत कौर ने प्रथम, इकजोत पब्लिक स्कूल के अजय ने द्वितीय और शिवालिक पब्लिक स्कूल के वंश ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। पहली कक्षा में कौटिल्य इंटरनेशनल स्कूल का मनजीत प्रथम, स्वामी दयानन्द माडल स्कूल की रुचिका द्वितीय और इकजोत पब्लिक स्कूल का कवीश तृतीय स्थान पर रहा। दूसरी कक्षा में इक जोत पब्लिक स्कूल के विकास ने प्रथम, सरस्वती विद्या मंदिर को छवि ने द्वितीय तथा महावीर माडल स्कूल की मोनिका एवं रेनबो डेबोर्डिंग की दृष्टि दोनों ने ही तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दो सौ से अधिक संख्या के कारण विशेष श्रेणी के अन्तर्गत सर्वहितकारी विद्या मंदिर के नर्सरी ग्रुप में कनिष्क, सौरब और रिया क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। एलकेजी में मन्नत (गौरवकुमार), आराध्या, मन्नत (पवन कुमार) क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। यूकेजी में आस्था, प्रियांशी, संध्या ने क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। दूसरी कक्षा में शिवानी, भूपिन्द्र, वरुण ने प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त किया। उस विद्यालय के 500 बच्चे सम्मिलित हुए।

विशेष श्रेणी के अन्तर्गत ही डी. ए. वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल के नर्सरी ग्रुप में यशिका, जिगर, तनवीर क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। एलकेजी ग्रुप में रुहानी, गुरशमन सिंह, नव्या क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। यू के जी ग्रुप में महकप्रीत, अश्वी, सेजल क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान पर रहे। पहली कक्षा में गौरव, अर्शदीप, जसकीरत प्रथम, द्वितीय, तृतीय रहे। दूसरी कक्षा में सौरभ, महकदीप सिंह और ममनिक चावला ने क्रमश प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त किया। इस विद्यालय के 200 बच्चे सम्मिलित हुए.

प्रतियोगिता संयोजक वेदप्रकाशास्त्री ने सभी विद्यालय प्रमुखों, शिक्षकों, अभिभावकों का आभार व्यक्त करते हुए छात्र-छात्राओं के उज्ज्वल भविष्य के प्रति शुभकामना प्रकट की।

-वेदप्रकाश शास्त्री वैदिक शिक्षा परिषद फाजिलका

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज जवाहर नगर, लुधियाना का वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना के वार्षिक उत्सव पर प्रवचन सुनते आर्य बन्धु एवं बहनें जबकि प्रवचन करते हुए आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान् डा. नरेन्द्र जी वेदालंकार।

आर्य समाज जवाहरनगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव 24 से 27 नवम्बर 2016 को बड़ी श्रद्धा व उत्साह के साथ मनाया गया। इस कार्यक्रम का शुभारम्भ सुसज्जित यज्ञशाला में 25 नवम्बर को प्रात: मंगल यज्ञ के हुआ, जिस के ब्रह्मा आर्य समाज के पुरोहित पं० बाल कृष्ण की शास्त्री थे। 24, 25 व 26 नवम्बर को क्रमश: श्रीमती रिधिका एवं श्री केतक जी बस्सी, श्रीमती प्रीति एवं श्री. बी. आर. हीरा जी, श्रीमती प्रवीण एवं श्री भारत भूषण जी बांसल मुख्य यजमानों तथा अन्य सभी यजमानों ने यज्ञ में आहुतियां प्रदान की।

उत्सव का कार्यक्रम प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि को चला। आर्य जगत् के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान डॉ० नरेन्द्र जी वेदांलकार (दिल्ली) के उत्तम व प्रेरणादायक प्रवचन हुए जिसमें उन्होंने संध्या की महत्ता को बतलाते हुए कहा कि प्रत्येक मनुष्य को सभी संसारिक प्रवृतियों को छोड़ कर सुबह-शाम दो घड़ी परमात्मा के ध्यान में बैठना चाहिए क्योंकि उस समय सात्विक गुणों का विशेष प्रभाव होता है। संसारिक अन्धकारमय जीवन के परे जो परम-पिता परमात्मा का प्रकाश है। उससे अपनी आत्म ज्योति को प्रकाशित कर मानव जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करना हमारा ध्येय होना चाहिए। मुजफ्फर नगर से पधारे पं० घनश्याम प्रेमी व भूपेन्द्र आर्य जी ने अपने मधुर स्वर में भजनों को सुनाकर सब को आनन्दित किया। श्रीमती अनु गुप्ता, तथा अनिल कुमार जी ने भी एक-एक भजन प्रस्तुत किया।

उत्सव का समापन समारोह 27 नवम्बर रविवार को हुआ। प्रात: 8:30 बजे यज्ञ आरम्भ हुआ। तीन यज्ञ-कुण्डों पर बैठे यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से यज्ञ में आहुतियां प्रदान की। वेद मंत्रों के उच्चारण एवं यज्ञ की सुगन्धि से सारा वातावरण आनन्दमय बन गया। इस शान्त वातावरण में यज्ञ की पूर्णाहूति हुई सभी यजमानों को विद्वानों द्वारा आशीर्वाद दिया गया। सब को यज्ञ-शेष वितरित किया गया।

यज्ञ के पश्चात लुधियाना के प्रतिष्ठित (बी के स्टील) आर्य समाजी परिवार के श्री मनीष जी मदान ने ज्योति प्रज्वलित की एवं श्रीमती सुषमा एवं श्रीराम कृष्ण जी (पैराडाईज इंजीनियरिंग कार्पोरेशन लुधियाना द्वारा ध्वाजारोहण किया गया। श्री श्रवण कुमार बत्रा जी ने ध्वज गीत गाया तथा आर. एस. माडल स्कूल के छात्रों ने सुन्दर बैंड बजा कर सभी को आकर्षित किया। आर्य समाज की ओर से दोनों परिवारों को सम्मान स्वरूप स्मृति चिन्ह भेंट किए गए। आर्यसमाज समराला के पुरोहित पं० राजेन्द्र व्रत जी ने "सूनी हो गई भारत मां की गोदी, तू कृष्ण मुरारी आना सुदर्शन धारी आना।" गीत गाया।

मंच का संचालन करते हुए आर्यसमाज के प्रधान डा० विजय सरीन जी ने सभी विद्वानों व आर्य जनता का अभिनन्दन किया और पं० घनश्याम जी प्रेमी व भूपेन्द्र आर्य जी को भजन प्रस्तुत करने के लिए आमन्त्रित किया। उन्होंने अपने भजनों की लड़ी प्रभु भक्ति के भजनों से "प्रभु भक्ति चिन्तन किया करो।' से प्रारम्भ कर देश भक्ति तथा महर्षि दयानन्द पर आधारित गीत "हमें आज दुनियां ये, जीने ना देती, दयानन्द गर न आते सुना कर लोगों को आनन्द विभोर किया।

उस उत्सव में गर्वनमेट कालिज फार वुमन लुधियाना की पांच छात्राओं को बी. ए. फाईनल की परीक्षा में संस्कृत विषय में अपने महाविद्यालय में प्रथम पांच स्थान प्राप्त करने पर श्रीमती सुमित्रादेवी जी बस्सी द्वारा आरक्षित राशि से पारितोषिक एवं स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया। श्रद्धेय डॉ० नरेन्द्र जी वेदालंकार ने उत्सव का संदेश देते हुए कहा कि भगवान श्री कृष्ण ने गीता में बतलाया है कि "वेद" परमात्मा की वाणी है जो हमें कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। यज्ञ जीवन का सर्वश्रेष्ठ कर्म है। जिसके द्वारा विश्व का कल्याण होता है। विश्व-शांति के लिए हमें महर्षि दयानन्द द्वारा निर्देशित सोलह-संस्कारों को अपना कर सब को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ मानव बनना होगा। स्वामी दयानन्द जी ने ही दुनियां के समक्ष वेदों के सही अर्थों को प्रस्तुत किया तथा वेद एवं यज्ञ द्वारा सभी धर्मों के लोगों को एक मंच पर इकठ्ठा करने का यत्न किया।

आर्य समाज जवाहर नगर के प्रधान डॉ० विजय सरीन जी ने उत्सव की सफलता के लिए परम-पिता का धन्यवाद किया। तदोपरान्त सभी विद्वानों, संगीतज्ञों तथा उपस्थित आर्य जनता का धन्यवाद किया। लुधियाना को सभी आर्य-समाजों स्त्री आर्य समाजों, शिक्षण संस्थाओं, पुरोहित सभा आर्य वीरदल आर्य समाज समराला के सदस्यों के साथ-साथ नगर के गणमान्य व्यक्तिों ने बहुसंख्यों में उपस्थित होकर धर्म लाभ उठाया तथा उत्सव की शोभा को बढ़ाया। कार्यक्रम के उपरान्त दोपहर 1 बजे सभी ने मिल कर प्रेम पूर्वक ऋषि लंगर ग्रहण किया।

आर्य समाज जवाहर नगर के उपप्रधान श्री राजेन्द्र बेरी, बृज मोहन, अरोड़ा, महामंत्री श्री अनिल कुमार कोषाध्यक्ष श्री राजीव गुप्ता, सहकोषाध्यक्ष श्री संजीव गुप्ता, मंत्री श्री बृजेश पुरी, पुस्तकाध्यक्ष श्री अजय मोंगा, अंतरंग सदस्य श्री ओम प्रकाश गुप्ता, हरबंस लाल सहगल, श्रीमती अनु पमा गुप्ता, वीना गुलाटी, ममता शर्मा, श्वेता शर्मा का विशेष सहयोग रहा। आर्य समाज के सभी सदस्यों एवं परिवार के बच्चों ने बड़ी लग्न तथा परिश्रम के साथ कार्य किया। सभी का हृदय से धन्यवाद।

-विजय सरीन-प्रधान

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।